आत्मनिर्भरता का मायाजाल

प्रधानमंत्री की पिछले दिनों की गई 'आत्मनिर्भर भारत' की घोषणा से भारत की 30 वर्षों से चली आ रही उदारवादी अर्थव्यवस्था की नीति को एक खतरा सा पैदा हो गया है। हालांकि प्रधानमंत्री ने इस बात को स्पष्ट किया है कि उनकी इस अपील का अर्थ 'आत्म-केन्द्रित व्यवस्था को बढ़ावा देने से न लगाया जाए। फिर भी संकीर्ण मानसिकता , घोर पूंजीवादी और औसत दर्जे के लोगों को इस ओर फिसलने में समय नहीं लगेगा।

कोविड-19 जैसी महामारी ने आत्म-निर्भरता वाले तत्व को पूरी तरह से बढ़ावा दिया है। प्रधानमंत्री ने घोषणा की है कि भारत अब पीपीई किट और मास्क की एक बड़ी संख्या प्रतिदिन निर्मित करने में सक्षम हो गया है। कहने का तात्पर्य यही लगाया जा रहा है कि अन्य देशों की तरह भारत भी चीन पर अपनी निर्भरता को खत्म करता जा रहा है।

महामारी से पहले भी वैश्वीकरण खतरे में नजर आ रहा था। अमेरिका में डोनाल्ड ट्रंप का जीतना , ब्रैक्जिट, हंगरी में विक्टर ऑर्बन और तुर्की के रेसेप आर्डोगन की नीतियां हमें इसी का संकेत दे रही थीं। भारत में मोदी और शाह भी इसी पथ पर चलते दिखाई दे रहे हैं। इन सबके बीच वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला के लिए भारत को तैयार करने की अपील ही आशा की एकमात्र किरण बची है।

फिर भी पिछले तीन वर्षों में मोदी सरकार व्दारा लिए गए निर्णयों से अनेक तरह की चिंताएं जन्म लेती हैं। इस सरकार ने तीस वर्षों से चले आ रहे व्यापार उदारीकरण का खात्मा सा करने के लिए अनेक वस्तुओं पर कर को बढ़ा दिया है। पिछले वर्ष रिजनल कांप्रिहेन्सिव इकॉनॉमिक पार्टनरशिप से पीछे हटकर सरकार ने अपनी कंपनियों को वैश्विक प्रतिस्पर्धा में जाने का अवसर ही नहीं दिया। इसका दुष्प्रभाव भारत की प्रभावी कंपनियों और उपभोक्ताओं पर पड़ा।

आत्म-निर्भरता की भाषा , देश में आने वाले निवेशकों को भी आशंकित करती है। उन्हें यह लग सकता है कि भारत बहुराष्ट्रीय कंपनियों को अपनी घरेलू कंपनियों के साथ खुली प्रतिस्पर्धा न करने दे, और विदेशी कंपनियों से ज्यादा प्राथमिकता अपनी कंपनियों को देता रहे। आखिर सरकार आत्मनिर्भरता के माध्यम से क्या संदेश देना चाहती है ?

अगर वॉलमार्ट को भारत सरकार के इस रुख का पता होता , तो वह शायद फ्लिपकार्ट में इतने बड़े निवेश का कदम नहीं उठाता।

1990 तक के भारत की यही कहानी रही है। समाजवाद के नाम पर भारत की अर्थव्यवस्था को बांधकर रखा गया था। यदि एक औसत भारतीय की नजर से देखें , तो समाज वाद का वह दौर बेकार के उत्पादों से भरा हुआ था। कंपनियों का टिकना और विकास उनके उत्पादों की गुणवत्ता पर आधारित न होकर , सरकारी पहुंच पर निर्भर करता था।

उदारीकरण के साथ ही भारत को जितना लाभ हुआ , वैसा शायद ही अन्य किसी देश को हुआ हो। काश कि भारत ने भी चीन की तरह अपने आर्थिक परिवर्तन को 1991 की जगह 1971 में ही शुरू कर दिया होता , तो आज भारत एशिया की सबसे मजबूत अर्थव्यवस्था होती। सरकार के पास अवसर है कि वह वैसी किसी गलती को न दोहराते हुए भारत की विकास की दिशा में खुली अर्थव्यवस्था के लिए नीतियां बनाए।

'द टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित सदानंद द्यूमे के लेख पर आधारित। 1 जून , 2020

AFEIAS